आदर्श दाम्पत्य-जीवन

(कुछ दृष्टान्त)

(श्रद्धेय डॉ० विश्वामित्र जी महाराज)

सनातन संस्कृति में सम्पूर्ण जीवन को चार आश्रमों में विभाजित किया गया है। इनमें गृहस्थ आश्रम का दूसरा स्थान है और उसके कर्तव्य-कर्मों को सर्वश्रेष्ठ बताया गया है। विश्व में अधिकांश संख्या गृहस्थों की है, यदि इनका जीवन साधनामय और भक्तिमय हो जाय तो यह विश्व-शान्ति का अमोघ साधन बन जाय; अतएव शास्त्रों, सन्तों-महात्माओं, ऋषि-मुनियों एवं मनीषियों की अधिकांश शिक्षाएँ इन्हीं के लिये केन्द्रित एवं वर्णित हैं। वस्तुतः सुखी-शान्त जीवन का आधार तो प्रेम ही है। सन्त जन कहते हैं :

फिर कर देखा जगत् जो, जहाँ प्रेम लवलेश।
वहाँ तो सुख रस है कुछ, शेष है कष्ट कलेश।।
मित्र बन्धु सम्बन्ध में, स्नेह सूत है सार।
प्रेम बिना नीरस सभी, अपना पर संसार।।

(भक्ति प्रकाश)

दाम्पत्य-जीवन किस प्रकार से आदर्श बनकर गृहस्थियों को सुखमय, आनन्दमय तथा शान्तिपूर्ण सफल जीवन प्रदान कर सकता है, इसे कुछ एक उल्लेखनीय दृष्टान्तों के माध्यम से जानने की चेष्टा करते हैं।

(1)

यूरोप के एक निर्धन दम्पति वृद्धावस्था में प्रवेश कर गये। विवाह की वर्षगाँठ आने वाली है, सोचा -सम्भव है इसके बाद इकट्ठे कभी न मना सकें, अतः एक-दूसरे को उपहार देना चाहते हैं। प्रबल इच्छा है, साधन पर्याप्त नहीं, कैसे करें? पर इच्छा पूरी करने का दृढ़ संकल्प है। पति ने निर्णय लिया-पत्नी के सुनहरे बालों के लिये एक सोने का क्लिप खरीदकर भेंट करूँगा। पत्नी ने पति को घड़ी के लिये सोने की चेन देने का निर्णय लिया। बाजार गयी, चेन खरीदने के लिए अपने बाल बेचे। पति ने क्लिप खरीदने के लिये अपनी घड़ी बेची। आज शादी का शुभ दिवस है- एक-दूसरे को उपहार भेंट करने लगे। पति ने देखा, सिर पर स्कार्फ बँधा है, पूछा-'ऐसा क्यों?' उतार कर देखा-बाल ही नहीं। पत्नी ने घड़ी के लिए चेन देनी चाही, तो कलाई पर रुमाल बँधा है, घड़ी नहीं है। परस्पर प्रेम-त्याग के प्रति चारों आँखों में प्रेम के अश्रु छलक रहे हैं। परस्पर ऐसी सद्भावना हो तो गृहस्थ जीवन निःसन्देह वैकुण्ठ से कम नहीं।

(2)

किसी गाँव में एक किसान अति सुख से रहता-छोटा परिवार, आवश्यकता अनुसार खेत से अनाज हो जाता, छोटा-सा मकान, दूध देने वाली गाय, पूरा परिवार अमृतवाणी का नित्य-पाठ करता, पत्नी-सन्तान आज्ञाकारी, रूखा-सूखा खा कर शान्तिपूर्वक निर्वाह होता। घर ऐसे जैसे सुख-सदन मन्दिर। एक दिन शहर से एक सम्बन्धी अतिथि आ गये। अपनी सामर्थ्य से अधिक सेवा-सत्कार किया। मेहमान ने कहा -' भाई! लोग कितनी उन्नति कर रहे हैं और तुम्हारा अभी भी घिसा-पिटा पुराना जीने का ढंग है। अरे ! अपने रहन-सहन का स्तर बदलो, इसे उच्च करो। तेरे बच्चे सुन्दर, पढ़ाई में भी ठीक हैं, उनकी शादी गाँव में ही न कर देना। नगरों में हर प्रकार की आधुनिक सुख-सुविधाएँ उपलब्ध हैं। अपने घर के लिये एक खाने की मेज लो, क्या सदा जमीन पर बैठ कर ही खाते-खिलाते रहोगे? अपने तथा अतिथियों के बैठने के लिए शहर से एक सोफा-सैट खरीदो। शीतल जल के लिये घड़ा छोड़ो, फ्रिज लो। गर्मी से बचने के लिए ए०सी० नहीं तो कूलर तो जरूर लो। भोजन बनाने के लिए लकड़ी-कोयला नहीं भाभी को गैस का चूल्हा लेकर दो, बेचारी के हाथ काले हो जाते हैं और धुएँ से आँखें खराब हो जाती हैं।' किसान ने विनम्रतापूर्वक कहा-'भैया! मेरे पास इतने पैसे नहीं, हम इतने में ही सुखी एवं सन्तुष्ट हैं, न चिन्ता है और न ही किसी प्रकार की परेशानी।' अतिथि ने आगे समझाया, 'तनिक सोचो, कल को

कृपया पृष्ठ पलटिए

लड़की की शादी करोगे, लड़के वाले पधारेंगे तो उन पर दकियानूसी घर तथा रहन-सहन देख कर क्या प्रभाव पड़ेगा? पैसे की चिन्ता न करो, खेत के ऊपर बैंक से ऋण ले लो।' कामी का संग काम जगाता है, भक्त की सत्संगति भक्ति का संचार करती है, ऐसे ही अतिथि के संग ने बड़ा बनने की महत्वाकांक्षा की चिंगारी छोड़ दी, जला दी कामना की आग। बैंक से लोन ले लिया और लग गया ब्याज की चिन्ता का घुन। चिन्तामुक्त को लग गया चिन्ता का रोग। शरीर तथा मन दोनों रोगी हो गये। खेत का काम भी कम, उपज कम। सुखी परिवार दु:खी जीवन बिताने लगा। अभी तक चादर आवश्यकता की सीमा को छूती थी, अब कामना-वासना को छूने लगी। आवश्यकता का तन तो ढका जा सकता है, है कोई ऐसा जो वासना के तन को ढक दे? बेशक संसार का सारा कपड़ा भी उस पर क्यों न डाल दिया जाय, सदा कम रहेगा। शान्ति तो निश्चिन्तता में है, सन्तोष में है। वस्तुओं में नहीं। अतएव उतने पाँव पसारें, जिस से चिन्ता, भय तथा अशान्ति छू न सकें। यदि चादर बढ़ाई नहीं जा सकती, तो व्यक्ति सिकुड़ना सीखे, तभी शान्ति पायेगा।

(3)

कबीर साहब सुखी दाम्पत्य-जीवन का उपदेश दिया करते थे। उनके पास लोगों की भीड़ लगी रहती, कुछ लोग सत्संग के लिये आते और अधिकांश तो घरेलू समस्याओं के समाधान के लिये पधारते। कबीर प्राय: आध्यात्मिक समाधान देते अर्थात् राम नाम जपने की प्रेरणा देते, उन्हें ईश्वरोन्मुख कर देते, इससे अधिकांश सन्तुष्ट होकर लौटते। आज एक गृहस्थ युवक सन्त जी से अकेले में कुछ बात करने तथा पूछने के लिये चुप बैठा है। कबीर दास जी ने चुप्पी तोड़ते हुए पूछा-'लगता है, आपका दाम्पत्य-जीवन कलह-क्लेश से भरा, सुख-शान्ति रहित है। इसी परेशानी से त्रस्त आप यहाँ पधारे हैं।' 'हाँ, महाराज! मैं तो अनेक बार अपनी पत्नी से सम्बन्ध-विच्छेद की कल्पना कर चुका हूँ। हम दोनों के स्वभाव में भारी असमानता है, इसीलिये अनबन रहती है। उसे सही ढंग से काम करना नहीं आता, मेरा कहा नहीं मानती।' परेशान युवक प्रवचन की अपेक्षा में प्रतीक्षा कर रहा था कि कबीर भीतर से सूत लाकर कातने लगे। कुछ मिनटों बाद आवाज लगायी, कहा-'अजी! अँधेरा हो रहा है, दीपक जलाकर रख जाओ।' युवक चकित, सूर्य अस्त नहीं हुआ, उजाला पर्याप्त है, दीपक की क्या जरूरत? पर, पत्नी जलता दीपक रख गयी है। युवक दोनों की मूर्खता पर हँस रहा है। पत्नी की ओर से किसी प्रकार का प्रतिवाद नहीं। थोड़ी देर बाद दो गिलास दूध ले आयी। एक-एक गिलास दोनों को दिया, दोनों पीने लगे। पत्नी ने पुन: आकर पूछा-'जी, दूध में चीनी कम तो नहीं रह गयी?' 'नहीं-नहीं, हमारे लिये पर्याप्त है।' संयोग की बात, दृष्टि कमज़ोर, पत्नी ने दूध में चीनी की बजाय नमक डाल दिया था। नमकीन दूध को कबीर मीठा-मीठा बताकर मजे से पी रहे हैं। युवक सोच रहा है- कैसे विद्वान! उन्हें चीनी और नमक में अन्तर ही पता नहीं, मैं क्यों आ गया यहाँ? प्रार्थना की-'कृपया सुखी गृहस्थ- जीवन के बारे में कुछ कहें? कबीर साहब ने कहा-'बेटा! क्या अभी भी कुछ कहना शेष है? सब कुछ तो कह दिया, सारे रहस्य जीवन के स्पष्ट कर दिये। शान्तिपूर्ण आदर्श दाम्पत्य-जीवन के लिये अति आवश्यक है पहले स्वयं दूसरों के अनुकूल बनना सीखो, तब औरों को अपने अनुकूल बनाओ। दोनों बदलो, कुछ तुम पत्नी का सहो और कुछ वह तुम्हारी बात माने। सुखी गृहस्थी की आधार शिला है प्रेम-प्यार। प्यार का अर्थ क्या है? साथी के दोषों, गलतियों को क्षमा करते रहना। अपनी भूलों के लिये क्षमा माँगते रहना। सदा मधुर-भाषी रहना। जहाँ प्रेम होगा, वहाँ सहनशीलता, क्षमा के गुण स्वत: प्रकट हो जाते हैं। ये गुण टूटते परिवार रूपी सूखे पेड़ों में भी हरियाली लाने में सक्षम हैं।'

'परंतु मैं तो महाराज! पत्नी में दोष-ही-दोष देखता हूँ, उस पर सन्देह भी करता हूँ।' 'भाई! तूने प्रेम की नींव ही उखाड़ दी। प्रेम का आधार है- विश्वास, यह अविचल हो। संशय तो विष-वृक्ष है, दोष किस में नहीं? सुखी-शान्त जीवन जीना चाहते हो तो पर दोष ढूँढ़ने और बखान करने की आदत त्यागो। प्रेम की ऐनक लगाओ तो सर्वत्र प्रेम-ही-प्रेम दिखेगा। याद रखो, परस्पर दोषों का दर्शन, कटु आलोचनाएँ, दाम्पत्य-जीवन के लिये विष के समान हैं। परस्पर विश्वास करो, अपनी उत्कृष्टता के अहंकार को मारो, एक-दूसरे को योग्यता से अधिक सम्मान दो, सुख दो, सहनशील बनो और इसे बढ़ाते रहो।'

कृपया पृष्ठ पलटिए

(4)

एक राजा ने सुना, उनके एक मन्त्री के परिवार में सौ सदस्य हैं और उन सभी के लिये भोजन एक चूल्हे पर बनता है। विश्वास न हुआ, अवसर मिलते ही राजा देखने के लिये मन्त्री के घर पहुँच गये। पूर्व सूचना भी नहीं दी। देखा, बिलकुल सत्य। पूछा-'क्या कभी झगड़ा नहीं हुआ? क्या कभी खाना पकाने या कम-अधिक भोजन मिलने पर विरोध नहीं हुआ, कलह-क्लेश नहीं हुआ?''नहीं राजन् ! ऐसा आज तक कभी नहीं हुआ। ''मन्त्री महोदय ! इस सौहार्द का रहस्य क्या है?''राजन् ! हम एक-दूसरे को सहना जानते हैं। जीवन में सहिष्णुता के अतिरिक्त सौहार्द बनाये रखने का कोई अन्य उपाय नहीं।' प्रेम की अभिव्यक्तियाँ हैं- सहनशीलता तथा क्षमा। जहाँ ये सब हैं, वह परिवार कितना बड़ा भी क्यों न हो, एक रहेगा, कभी टूटेगा नहीं, ऐसा लगेगा वहाँ प्रेम स्वरूप परमात्मा का वास है।

(5)

एक बस्ती में पाँच सदस्यों का परिवार, छोटा-सा घर, उसमें वृद्ध-वृद्धा, उनके दो पुत्र तथा एक पुत्री रहते। आय का कोई साधन नहीं। जंगल से लकड़ियाँ काट, शहर में बेचते तो रोटी का गुज़ारा चलता। सन्तान पर नियन्त्रण न रहा, बच्चे पढ़-लिख न सके, बिगड़ गये। स्वभाव झगड़ालू और उद्दण्ड हो गया। सर्वाधिक चिन्ता पुत्री की-लड़की के हाथ पीले कैसे हों? भाइयों ने कुटिल योजना बनायी-किसी धनवान् के साथ उसका विवाह रचते हैं, किसी बहाने पति को मरवा देंगे। इससे प्रचुर धन की प्राप्ति होगी, बहन की शादी कहीं और कर देंगे और स्वयं भी शादी करके आराम से जीवन व्यतीत करेंगे। तनिक भाग-दौड़ करने पर एक धनिक युवक मिल गया, उससे बीस हजार रूपये ले लिये और शादी कर दी। विदाई के समय बहन को समझा दिया-शीघ्र ही पति का काम तमाम कर देना। बहन ससुराल चली गयी। शादी के तीसरे दिन पति के साथ मायके फेरा डालने के लिये चल पड़ी, प्यास का बहाना बनाकर कुएँ की ओर ले गयी। पति कुटिल चाल से अनभिज्ञ कुएँ से पानी निकालने लगा, पत्नी ने धक्का मारा और बेचारा पति कुएँ में जा गिरा। पत्नी मायके पहुँच गयी, ससुराल से सारा सोना, चाँदी, कैश पहले ही साथ बाँध लायी थी। भाई प्रसन्न। युवक तैरना जानता था, कुएँ के भीतर से आवाज सुन प्यासे राहियों ने बाहर निकाला, कपड़े सुखाये और ससुराल पहुँच गया। जीवित देख कर सभी चकित एवं दुःखी। पति ने जतलाया नहीं-किसी प्रकार की कोई चर्चा नहीं की। रीति-अनुसार अगले दिन ससुराल से पति ने पत्नी सहित विदा ली। समय के साथ परस्पर प्रेम बढ़ता ही गया। कई साल बीत गये, दो पुत्र पैदा हो गये। सन्तान के प्रति प्रेम और ममता में पति-पत्नी ऐसे एकाकार हुए जैसे दूध-पानी। पुत्र जवान हुए; बड़े चाव से, धूम-धाम से विवाह हुए। उनके भी बच्चे हुए। दादा-दादी फूलते-फलते सम्पूर्ण परिवार को देख-देख प्रसन्न एवं सन्तुष्ट होते। पति इस सब के लिये भगवान् का लाख-लाख शुक्र मना कृतज्ञता व्यक्त करता-प्रातः ब्रह्म मुहूर्त में उठता, घण्टों राम-नाम जपता। दिनभर भी जप-पाठ, स्वाध्याय-सत्संग में निमग्न रहता। एक बार बड़ी वधू ने ससुर से पूछा- 'पिता जी ! आप राम-राम इतना क्यों जपते हैं?' 'बहू ! भगवान् से बड़ा भगवान का नाम, राम से अधिक शक्ति है राम-नाम में। श्रीराम ने स्वयं आकर एक आध को बचाया है, परंतु राम-नाम तो नित्य-प्रति लाखों-करोंड़ों का उद्धार करता है। राम-नाम में असीम शक्ति है एवं अपरिमित सामर्थ्य। इसने न केवल मेरी जान ही बचायी है बल्कि मुझे क्रोध, झगड़ा, वैर-विरोध, अशान्ति तथा न जाने कितनी ही बुराइयों से बचाया है। राम-नाम जपने का अर्थ है-कभी किसी के दोष न देखना, कभी किसी की बुराई को न उछालना, बल्कि पर्दा डालना। बेटी ! तब जीवन सदा शान्तिपूर्वक बीतेगा। जापक के अन्दर से बदले की भावना उन्मूल हो जाती है, वह तो शुद्ध प्रेम की मूर्ति बन जाता है।'

पत्नी भी पास बैठी सुन रही थी-सोचा ऐसे देवतुल्य पति का साहचर्य पाकर मैं धन्य हो गयी। कितनी भाग्यशाली हूँ मैं। पति हन्ता होते हुए भी पति की मेरे प्रति अतुल्य क्षमा, राम-नाम का ही प्रताप है। आँसू बहे पश्चात्ताप के, प्रायश्चित हुआ और राम-नाम की उपासिका बन गयी। प्रेम, सहनशीलता और क्षमा की करामात थी यह।

कृपया पृष्ठ पलटिए

(6)

ब्रह्मलीन स्वामी श्री अखण्डानन्द जी की एक शिष्या अपने नव-विवाहित पुत्र और बहू को आशीर्वाद दिलाने महाराज जी के पास लायी। सबने प्रणाम किया और बैठ गये। लड़का उच्छृंखल स्वभाव का, अंग्रेज़ी शिक्षा से बिगड़े हुए संस्कारों वाला था, उसकी न धर्म में आस्था थी, न सन्तों-महात्माओं के प्रति श्रद्धा। उसे सब पाखण्ड लगता। भगवान् और धर्म का मखौल उड़ानेवाला तथा साधु सन्त को समाज पर बोझ समझने वाला युवक था वह। दु:खी माँ ने कई बार स्वामी जी से प्रार्थना की थी-'कृपया आशीर्वाद दें, लड़के की उद्दण्डता दूर हो, वह सन्मार्ग पर चले।' आज भी पत्नी के आग्रह से आया है, माँ के कहने से नहीं। महाराज ने पूछा-'बेटा! तुम्हारे कितने हाथ हैं?' 'कोई पूछने की बात है-दो हैं।' 'और पत्नी के?' खीझकर उत्तर दिया, 'उसके भी दो।' 'दोनों मिला कर कितने हुए?' 'चार'। 'बेटा! पाँव कितने हैं?' अधिक खीझकर कहा-'दो मेरे, दो मेरी पत्नी के और दोनों के मिला कर चार।' 'शाबाश बेटा! जब पति-पत्नी सदाचारी जीवन व्यतीत करें अर्थात् धर्मानुकूल चलें तो चतुर्भुज हो जाते हैं और यदि शास्त्र विरुद्ध दुराचारी जीवन-यापन करें तो बिलकुल पशुवत् चतुर्पाद हो जाते हैं। अधर्माचरण अर्थात् झूठ, भ्रष्टाचार, चोरी, बेईमानी तथा हेरा-फेरी धन तो दे सकता है, पर शान्ति नहीं। एक अर्थ के मिलने पर अनके अनर्थ भी साथ हो लेंते हैं।' युवक ने हाथ जोड़ कर कहा-'मैं आप के उपदेश का सदा ध्यान रखूँगा।' 'धन्यवाद बेटा! सुखी दाम्पत्य-जीवन के लिये एक बात और याद रखना-जिन्दगी में झुकना सीखना, जिसे झुकना आ गया, वह बाज़ी मार गया। आज के युग में यह दुष्कर कार्य है। देखो न, आज का पति पत्नी के आगे नहीं झुकता, पत्नी पति के आगे नहीं झुकती-मैं किस बात में कम हूँ? तो दोनों कचहरी में मिलते हैं। सहना न जानने वाली सास बहू के आगे नहीं झुकती। उसका स्थान उच्च है, बहू अपने को अधिक बुद्धिमान समझती है, अत: सास के आगे नहीं झुकती तो पहले चूल्हा अलग होता है, फिर एक को घर छोड़ वृद्धाश्रम जाना पड़ता है या किराये के मकान में रहना पड़ता है। मत सोचना कि झुकना अर्थात् निरभिमानिता-विनम्र होना कमजोरी का चिह्न है ; नहीं, यह शूरवीरता एवं महानता का प्रतीक है।'

(7)

एक सन्त गाँव-गाँव विचरते हुए एक बार दक्षिण भारत के किसी गाँव में रुके। एक ग्रामीण ने प्रार्थना की-'बाबा! हमारे यहाँ भोजन के लिये पधारें।' सन्त भोजन के लिये बैठे, गृहिणी पत्नी सामने बैठ अत्यन्त श्रद्धा से परोसती। कुछ और लाने के लिये खिसक-खिसक कर चली तो सन्त ने अनुमान लगाया कि लँगड़ी होगी। पूछा-'देवि! क्या तुम्हारा पाँव खराब है?' 'मै अपंग हूँ बाबा! पर पूछ लें पति से, मैने कभी इन्हें कोई कष्ट नहीं दिया। गेहूँ पीसती हूँ, भोजन बनाती हूँ, बर्तन साफ करती हूँ, इनके काम में मदद भी करती हूँ, इन्हें सिर्फ पानी भरना पड़ता है।' पति ने तुरन्त कहा-'बाबा! मैं भी इन की सेवा में कोई कमी नहीं रखता, सदैव ध्यान रहता है कि इन्हें इस अभाव का आभास न हो, कन्धों पर बैठा कर तीर्थ-यात्रा करा लाया, सप्ताह में एक बार इसी प्रकार मन्दिर ले जाता हूँ, हमने कभी कोई कमी महसूस नहीं की। परस्पर सहयोग एवं स्नेह से जीवन प्रसन्नता पूर्वक यापन हो रहा है।' सन्त प्रसन्न, पूछा-'तुम्हारी पत्नी अपंग कैसे हो गयी?' 'बाबा! यह तो जन्म से ही ऐसी है।' चकित हो पूछा-'तो वत्स! तुम ने इस से विवाह ही क्यों किया?' 'बाबा! ईश्वर ने जब हमें जन्म दिया तो जीने का अधिकार भी मिलना ही था। यदि हर कोई अपंगों से दूर रहने लगे तो इनका जीना कठिन अर्थात् निराशापूर्ण हो जायगा। अत: स्वेच्छा से सहर्ष स्वीकारा है।'

सन्त ग्रामीण के उत्कृष्ट दैवी विचारों तथा श्रेष्ठ दिव्य आचरण से मुग्ध हो इतना ही बोले-'वत्स ! जिस परिवार में तुम्हारे-जैसा उच्च, उदात्त विचारों वाला पति हो, दोनों में परस्पर समादर तथा सेवा भाव हो, सन्तों के प्रति भी श्रद्धा हो, उस परिवार का नर नारायण और नारी नारायणी कहलाने योग्य है और वह घर वैकुण्ठ है।'

— o —